बूआ जी (संस्मरण)

विवेक श्रीवास्तव
402, मुरलीपुरा स्कीम, जयपुर-302039
9414242128

ध्यान है बचपन में जिस मकान में रहते थे, उस मकान में छत पर पतंग उड़ाते में उसी मंज़िल पर रहने वाली बूआ जी (पहले आंटी कहने की कल्चर नहीं थी) से जब कभी पानी माँगते थे तो वो ग्लास भर कर अलग रख देती थी, हाथ में नहीं देती थी, मुझे फ़ील होता था, लगता था वो छूआछूत क्यों करती हैं? जबकि स्कूल में हमें छूआछूत करने को मना किया जाता है।

कहते थे कि नहाने के बाद ही वो रसोई में घुसती थीं और दुबारा कभी बाथरूम जाने के बाद कपड़े बदलती थी।

क्या मज़ाल कोई बाहर से जूते-चप्पल कमरे में ले जाये ! लकड़ी की चट्टियों की आवाज़ से बूआ जी की लोकेशन विदित होती रहती थी। फूफाजी भी उनकी भावनाओं की क़द्र करते थे और अनुशासित से दफ़्तर से लौटते ही सीधे गुसलख़ाने में जाते थे।

पूजा-पाठ भी नियमित करती थीं। सारे व्रत उपवास भी। नवरात्रि में अष्टमी को कन्याओं के साथ लांगरे भी जिमाती थीं और उस समय हम बच्चों के पैरों को जल से धोती थी, जबकि वो मेरी दादी की उम्र की रही होंगी, शायद बच्चों को वो वास्तव में भगवान का रूप मानती थी। खाना बहुत स्वादिष्ट बनाती थी, हर चीज़ का भोग पहले ठाकुर जी को लगता था। उनकी बनाई खीर बहुत स्वादिष्ट होती थी, तब देश में ग़रीबी का आलम था। चीनी राशन पर मिलती थी, दूध भी हर वक़्त नहीं मिलता था इसलिए तब के बच्चों को मिठाई इतनी सुलभ नहीं थी, जितनी अब है। कोई भी दावत जिसमें खीर हो, सुन कर ही बच्चों की लार टपकने लगती थी।

गैस सिलेंडर को बूआ जी धो कर ही रसोई में रखती थीं और हमेशा रेग्यूलेटर भी हाथ धो कर छूती थीं।

मुझे लगता था कि ये कितना छूआछूत करती हैं ! उनसे पानी माँगने में भी बहुत संकोच होता था।

कभी लगता था ये बच्चों को गंदा समझती हैं, पर एक दिन मैं और मेरा भाई छत पर पतंग उड़ा रहे थे। मैंने चरखी पकड़ रखी थी। मेरे भाई को बंदरों ने घेर लिया, मैं चरखी फेंक मदद के लिए बूआ जी के पास भागा। बूआ जी खाना

खा रही थी। वो खाना छोड़, बाँस लेकर द्रुतगति से दौड़ीं और मेरे भाई को बंदरों के बीच से खींच लाई, बूआ जी का वो दैवीयरूप तो कभी नहीं भूलता, आज के समय में शायद ही कोई उदाहरण ऐसा मिले। मेरे घर बड़ा कोई उस समय नहीं था। बुआ जी की बेटी भाई को गोद में उठा कर डॉक्टर के पास ले कर गई।

वो अक़सर कहा करती थीं कि उन्हें कभी बुख़ार नहीं आया, न उन्होंने कभी कोई दवाई ली।

उन्हें कभी किसी ने सूर्योदय के बाद सोते नहीं देखा, वो सूर्योदय से पूर्व उठा करती थीं और नित्यकर्म तथा पूजा-पाठ सूर्योदय से पूर्व सम्पन्न कर लेती थीं। रात को भी जल्दी सोती थीं और सुबह उठ कर पूरे घर में झाड़ू लगाती थी, कभी कोई दर्द उन्हें नहीं सताता था।

पहले डिलीवरी भी घर में ही होती थी, वो भी खूब सारी । बूआ जी के भी 5-6 बच्चे थे, जिनमें कुछ का विवाह भी हो चुका था। बच्चों के बच्चे भी थे। उनके अनुशासन से छोटे-बड़े सब भयभीत रहते थे, सब समझते थे कि बूआ जी को सफ़ाई का मीनिया है, पर तब बड़ों से ज़बान दराज़ी, बहुत बड़ा गुनाह समझा जाता था, मन ही मन में भले ही थोड़ा भुनभुना लें।

बहुत अधिक पढ़ी हुई तो नहीं थी, पर बूआ जी अख़बार पूरा पढ़ती थी, हर ख़बर से वाकिफ़ रहती थीं।

अचूक देसी नुस्ख़े बेशुमार जानती थीं।

मुझे बचपन में जब खाँसी होती तो बूआ जी साबित नमक की कंकड़ी मुझे चूसने को देती थीं। काले कुत्ते को शनिवार को दूध पिलाने का मशविरा भी मेरी माँ को देती थीं। कभी कुछ दिन हम बच्चे छत पर न जाएं तो समझ जाती थी कि कोई बच्चा बीमार हो गया है, तो देखने आती।

तब बच्चे पूरे मौहल्ले के बच्चे हुआ करते थे, आस-पड़ोस के किसी को भी उन्हें पढ़ाई से उठा कर हलवाई से दही ले कर आने का आदेश देने का अधिकार था। डाँट भी कोई भी देता था और नुस्ख़े भी दे देता था। नज़र भी उतार देता था, जबकि नज़र लगती भी होगी तो किसी आस-पास वाले की ही, टोटकों से भी सटीक इलाज किया जाता था।

वो मकान में रहने वाले अन्य परिवारों की महिलाओं में सबसे बड़ी महिला थी। करवा चौथ की पूजा सामूहिक रूप से उन्हीं के नेतृत्व में होती थी और हम बच्चे चंद्रमा के उदय होने की प्रतीक्षा में आसमान पर टकटकी लगाए रखते थे और दौड़ कर उसके उगने की ख़बर देते थे। शरद पूर्णिमा पर वो हमारे साथ चाँदनी में सूई पिरोने का प्रयास करती थीं। होली पर सब बच्चों को अपने हाथ से बनाई एक-एक गुजिया खाने को देती थीं।

ये चीज़े आपस में लोगों को जोड़े भी रखती थीं।

बूआ जी के व्यवहार के कारण मैं उन्हें वहमी, पुरातनपंथी और छुआछूत करने वाला समझता था, पर शायद ये उनका स्वच्छता को जीवन में अपनाने का और सोशल डिस्टेंसिग का पालन करने का ही तरीक़ा था, जिससे हमारे पूर्वज अपने को स्वस्थ रखते थे, पर मेरा अपरिपक्व मन उन्हें नहीं समझता था और अभी तक भी मैंने कभी उस तरीक़े को नहीं अपनाया।

आज कोरोना ने इस बात को सिद्ध कर दिया है कि बूआ जी न वहमी थी, न पुरातन पंथी, न वो उनकी छूआछूत थी, वो समय से बहुत आगे थी, उन्होंने सालों पहले सफ़ाई के महत्व को समझ कर शुचिता को जीवन में अपनाया हुआ था और नियमित तथा आत्मनिर्भर जीवनचर्या को भी, शायद इसीलिये उन्हें कभी बुख़ार नहीं आया। वास्तव में वो हमारी संस्कृति की वाहक थीं और दूसरों तथा अपने परिवार की नापसंद की परवाह किये बग़ैर जो कुछ सबके लिए अच्छा था, वही किया करती थीं।

बूआ जी को ब्रह्मलीन हुए एक अरसा गुज़र गया । सुना था आख़री समय तक वो चलती फिरती रही और अपना काम करती रहीं। आज मैं, या कहूँ कि सकल विश्व ही वो कर रहा है, जो बूआ जी दशकों पहले किया करती थी।

आज बूआ जी को ग़लत समझने के कारण उनसे क्षमा माँगने और उन्हें नमन करने की इच्छा हुई।